International Journal of Applied Research 2015; 1(11): 1142-1143

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2015; 1(11): 1142-1143
www.allresearchjournal.com
Received: 22-09-2015
Accepted: 18-10-2015

डॉ. सुशील निम्बार्क
सह आचार्य चित्रकला, राज मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर, राजस्थान, भारत

Corresponding Author:
डॉ. सुशील निम्बार्क
सह आचार्य चित्रकला, राज मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर, राजस्थान, भारत

हिन्दी भाषा की उत्त्पति और विकास

डॉ. सुशील निम्बाक

प्रस्तावना

संस्कृति किसी राष्ट्र, देश या समाज की चेतना का वह चिरंतन स्त्रोत होती है जिसके सहयोग से युगान्तरित काल तक परम्परागत विश्वासों और आस्थाओं में बन्धे हुए मानव–समूह उच्च से उच्चतर लक्ष्य की ओर लगातार अग्रसर होते रहे है। साथ ही महापुरूषों अथवा पूर्वजों द्वारा स्थापित आदर्शो, मानदण्डों एवं सिद्धान्तों का अनुकरण करते हुए अपने जीवन की सफलताओं, असफलताओं का मूल्यांकन करते हैं। संस्कृति मनुष्य की मानसिक एवं शारीरिक शक्तियों को उन्नतकर उन्हें आगे विकास का अवसर प्रदान करती है। संस्कृति का प्रभाव व्यक्तिगत तथा सामाजिक उत्तरदायित्वों एवं पारस्परिक व्यवहार में परिलक्षित होता है। जिसे साहित्य, दर्शन, विज्ञान के साथ–साथ कला में प्रभावी एवं प्रमाणिक रूपों में देखा जा सकता है। इस प्रकार संस्कृति किसी विशिष्ठ मानव समाज की सम्पूर्ण उपलब्धियों की सूचक है। व्यापक संदर्भ में संस्कृति मानवजीवन के नैतिक, बौद्धिक और सामाजिक सभी पक्षों में परिष्कार के प्रयत्न को प्रकट करती है। यही कारण है कि किसी भी व्यक्ति, समाज या राष्ट्र की पहचान संस्कृति के आधार पर ही की जाती है।

संस्कृति के दो पक्ष है – एक आध्यात्मिक और दूसरा लौकिक । एक हमारे मानसिक एवं भावात्मक जगत की स्थिति को प्रदर्शित करता है और दूसरा व्यवहार जगत की स्थिति को। व्यवहार जगत पर भी मानसिक जगत का अंकुश रहता है इसीलिए देश–विदेश के लोगों में भिन्नता देखी जा सकती है परिणामतः लौकिक संस्कृति के स्तर भी भिन्न–भिन्न हो जाते है। जैसे–जैसे मनुष्य का मानसिक और बौद्धिक विकास होता है, उसके व्यवहार में भी रूपान्तरित अंतर आता है। प्रागऐतिहासिक युग से आज तक हमारा सामाजिक एवं संस्कृतिक विकास इसका साक्षी है।

इस सांस्कृतिक विकास का स्थूल रूप हमारी कलाओं में प्रकट हुआ है। यह भी कहा जा सकता है की सांस्कृतिक स्वरूप का साक्षात्कार कलाओं के माध्यम से होता है। इस प्रकार स्थूल जगत को मानसिक जगत के रूपों कि के अनुसार सुन्दर रूपों में परिणत कर लेना ही कला है। या यूं कहे कि कला में स्थूल जगत से ही, कहीं न कहीं विषय वस्तु प्रयुक्त होकर कला का माध्यम बन जाते है। हमारी वेश–भूषा, हमारा व्यवहार, हमारा दैनिक जीवन, सभी मन के संस्कारों से प्रभावित होते है। हमारी कलाओं में हमारे इस स्वरूप का ही यथोचित अंकन होता है। कविता, चित्रकला, संगीत आदि में इसकी विसतृतम एवं यथार्थपरक छवि दिखाई पड़ती है। ये सभी कलाएँ जीवन से सीधी प्रेरणा लेती है तथा परस्पर प्रभावित और प्रेरित भी होती है। यहीं नहीं कभी–कभी तो वे आपस में ही एक दूसरे की प्रेरणा अथवा आधार बन जाती है। इस दृष्टि से सभी कलाओं का परस्पर बहुत घनिष्ठ संबंध रहा है। जिन कथानकों के आधार पर कवियों ने काव्य की रचना की, उन्हीं को चित्रकारों ने अपनी कला की विषय–वस्तु बनाया है। ऐसा करने में उन्होंने प्रायः काव्य रचनाओं या ग्रन्थों में वर्णित कथानकों को ही अपना आधार बनाया है।

काव्य रचनाओं के आधार पर चित्रांकन की परम्परा बहुत प्राचीन है। बौद्धकवि अश्वघोष की रचनाओं से बुद्ध चरित्र और सौदरनंद के आधार पर अजंता की गुफाएँ चित्रित हुई। रामायण, कृष्ण चरित्र, महापुराणों आदि का आधार लेकर संपूर्ण मध्यकाल में देवालयों, गुफा, मण्डपों, ताड पत्रीय पोथियों तथा कपड़े और कागज पर अगणित चित्रों की रचना हुई। इसी प्रकार राजस्थानी चित्र शैली के चित्रकारों ने गीत–गोविन्द रसिकप्रिया, सूरसागर, कुमार सभव, आर्ष– रामायण, महाभारत इत्यादि को आधार बनाकर परिणामकारक चित्रों की रचना की। अन्य प्राचीन कथानकों के चित्रों की ही भांति राजस्थानी शैली के चित्रांकनों में भी कलाकारों ने समकालीन संस्कृति का समावेश जाने–अनजाने कर दिया है। चित्रों में कथा वस्तु का केवल घटना चक्र ही काव्य पर आधारित है शेष सभी बातों (परिधान, स्थापत्य, आकृति अंकन, रंगाकन) में ये चित्र तत्कालीन सामाजिक जीवन को ही प्रतिबिम्बित करते है। लौकिक संस्कृति प्राचीन कथानकों को समकालीन जीवन के परिपेक्ष्य में अंकित करने की प्रवृत्ति की दृष्टि से राजस्थानी शैली का बहुत महत्वपूर्ण स्थान रहा है इसमें अनेक महाकाव्यों (रामायण, महाभारत, रसिकप्रिया ..) के चित्रण में, कथा–वस्तु प्रकृति, देहक समाज, ऋतुओं, सामाजिक जन–जीवन का समावेश कलाकारों ने वैविध्यतापूर्ण एवं कलात्मकता के साथ अंकित किया है। कलाकारों ने बड़े उत्साह से जीवन के विविध पक्षों को काव्य ग्रन्थों या ग्रन्थों के आधार पर अपनी तुलिका का विषय बनाया। ये चित्र अनेक संग्रहों में बिखरे हुए है अब इनकों एक स्थान पर एकत्रित करना संभव नहीं है। इतना अवश्य संभव है कि विशेष छान–बीन तथा अध्ययन के द्वारा शैलगित विभिन्नताओं तथा कलाकारों के आधार पर इनकी अलग–अलग चित्रावलियों का निर्धारण कर लेना चाहिए।